विकास

पांडेय बेचन शर्मा

विकास

समुद्र का हाहाकार सुनकर या वज्र का गर्जन, भूकंप का महासंहार देखकर या ज्वालामुखी का स्फुर्लिंगोद्‌गार अथवा आकाश का विस्तार, कुछ ठीक नहीं कहा जा

https://www.hindiadda.com/vikas/

सकता, मगर एक दिन मनुष्य के मन में विश्वनियंता, विश्व-विनाशक, विश्व-नाथ, ईश्वर की पूजा और स्मरण के लिए एक मकान बनाने की इच्छा हुई।

ईश्वर की सृष्टि का ही अनुकरण करते हुए मनुष्य ने अपनी रचना शुरू की।

लंबे, मोटे वृक्षों की नकल में उसने खंभे बनाए। ऊँचाई पहाड़ों की नकल की, गुंबद बनाया आसमान के अनुकरण पर और 'ईश्वर का घर' एक दिन मनुष्य ने तैयार कर लिया।

मनोवांछित फल पाने के लोभ में मंदिर के लिए भगवान की एक मूर्ति भी गढ़ी गई!

और आदमी, कुटुंब और कुनबे के साथ पूजा करने लगा।

मगर पत्थर न पसीजा। आदमी की इच्छा, एक भी, ईश्वर या उस मूर्ति की कृपा से पूरी न हो सकी।

सकुटुंब, सारी शक्तियों का स्नेह बनाकर मंदिर में जला देने पर भी जब आदमी को अपने पथ पर प्रकाश नजर न आया, तब वह मंदिर की महिमा में संदेह करने लगा।

'किसी बुरी घड़ी में इसे बनाया था क्या? इसकी बनावट में ऐसी कोई भूल तो नहीं रह गई, जिससे ईश्वर इसमें आते ही न हों?

'तो? तो क्या सारा परिश्रम पानी में ही गया? नहीं-नहीं। मैं हारनेवाला नहीं। मैं दूसरा मकान तैयार करूँगा।'

आदमी ने दूसरा मकान तैयार किया - बिलकुल नए ढंग का। ईश्वर की मूर्ति में भी किंचित परिवर्तन कर उसे दूसरे रुख, दूसरी वेदी पर बैठाया। और इस घर का नाम पड़ा -गिरजाघर।

श्रद्धा, विश्वास, लोक और परलोक के सपने देखता आदमी 'अपने' लिए गिरजाघर में भगवान को फँसाने की कोशिशें करने लगा - मुट्ठी में हवा को थामने की!

मगर युगों तक धूप-द्वीप जलाने पर भी जब भगवान की आहट न लगी, तब आदमी बहुत घबराया!

उसका विश्वास, आँधी में पीपल के पत्ते-सा, थर्राने लगा।

'यह मंदिर...छिः!' उसने सोचा - 'अफीमची का अड्डा है - ईश्वर का विश्राम-स्थल नहीं। यह मूर्ति! कठोर पत्थर है, पत्थर... मैं इन दोनों को मटियामेट कर, अब एक ऐसा घर बनाऊँगा, जिसमें ईश्वर के निराकार रूप की पूजोपासना की जा सके। बिना उसकी पूरी खबर लिए मान नहीं सकता मैं।'

नई मिट्टी और नए जीवन से मनुष्य ने एक नया मकान - गुंबददार, स-मीनार तैयार किया - मस्जिद।

वहीं, सपरिवार एकत्र हो, अब आदमी उस निराकार परवरदिगार की नमाजें पढ़ने लगा। जिसके एक आकार को, चंद दिनों पहले, तैयार करने के बाद उन्हीं हाथों उसने बिगाड़ दिया था।

घुटने-टूटे, माथा फूटा - सिजदों में! नमाजों में रातें गईं, दिन गए! मगर 'मतलब' आदमी का न हुआ। हार रे!

हैरान वह, माथे पर हाथ रख, लंबी साँसें ले गाने लगा -

न "खुदा ही मिला, न विसाले-सनम -

न इधर के हुए, न उधर के हुए...!"

इस बार सारा खाक-पत्थर, सारी माया जोड़कर मनुष्य ने 'लेटेस्ट डिजाइन' का एक मकान तैयार किया -

नाम रक्खा - 'जेनरल स्टोर्स'। और, अब मनुष्य इस नए मकान में भयानक व्यापार करता है। सुबह से शाम तक खरीदारों की रेल-पेल से उसे फुर्सत नहीं। वह रोज ही अंजली भर सोना कमाता है। उसकी तिजोरियाँ रत्नों से भरी हैं अब तो!

और अब तो, आदमी 'बिजनेस' में इतना 'बिजी' रहता है कि मंदिर, चर्च या मस्जिद की बनावट या चर्चा में उसका कोई भी 'इंटरेस्ट' नहीं।

रहे ईश्वर - सो, ईश्वर तो अब मनुष्य पैसे को मानता है!